BA I Philosophy

Date

BA I Hons & BA I (Sub)

Q. न्याय के अनुसार ज्ञान स्रोत की परिभाषा एवं वर्गीकरण करें।

Q. Define the source of knowledge according to Naya philosophy and its classification.

Ans. 'अक्षपाद' के नाम से भी ~~प्रसिद्ध~~ प्रसिद्धित न्याय दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम ने ज्ञान का आधार के रूप में न्याय सूत्र की रचना की है जो न्याय दर्शन का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है जिसे आगे चलकर कई भाष्यकारों ने टीका लिखकर न्याय दर्शन के साहित्य को और बल दिया है। न्याय दर्शन के समस्त साहित्य को दो श्रेणी प्राचीन न्याय तथा नव्य न्याय में विभक्त किया गया है। प्राचीन न्याय का विषयवस्तु तत्वविज्ञान तथा नव्य न्याय का विषयवस्तु तर्कशास्त्र रहा है। ~~प्राचीन~~ न्यायसूत्र को ही सर्वश्रेष्ठ एवं ~~सर्वाधिक~~ प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है।

अन्य भारतीय दार्शनिकों की भाँति न्याय दर्शन का चरमलक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। इनके अनुसार मोक्ष की प्राप्ति तत्व ज्ञान के द्वारा ही संभव है अर्थात वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप को जानकर ही मोक्ष की प्राप्ति की जा सकती है, मोक्षानुसार एवं वास्तविक स्वरूप को जानने हेतु न्याय दर्शन सोलह पदार्थ की चर्चा की है जो निम्न प्रकार है।

P.T.O

MICO LUBRICANTS

1) प्रमाण - प्रमाण को यथार्थ ज्ञान के रूप में स्वीकार करते हुए न्याय दर्शन में चार प्रकार के प्रमाण को स्वीकार किया गया है। वे हैं - प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द और उपमान।

अब क्रमशः प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द प्रमाण के चार साधन हैं। मैं प्रत्यक्ष के बारे में विचार करने के पूर्व ज्ञान के स्वरूप की चर्चा अपेक्षित है जिसका स्थान न्याय के प्रमाणशास्त्र (Epistemology) विशिष्ट रूप से है।

न्याय दर्शन में ज्ञान को (बुद्धि) Cognition उपलब्धि (apprehension) का पर्याय के रूप में माना गया है अर्थात् वस्तुओं की अभिज्ञप्ति को ज्ञान या बुद्धि कहा गया है। जिस प्रकार दीपक सारी वस्तुओं को प्रकाशित कर देता है उसी प्रकार ज्ञान भी वस्तु के वास्तविक स्वरूप को प्रकट कर देता है। ज्ञान भी दो प्रकार के होते हैं - प्रमा और अप्रमा। वास्तविक ज्ञान को प्रमा कहा जाता है तथा अवास्तविक या अयथार्थ ज्ञान को अप्रमा कहा जाता है। प्रमा के संशय अथवा त्रुटि की गुंजाइश नहीं रहती तथा अप्रमा में संशय की स्थिति बनी रहती है। प्रमा में वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण होता है, अप्रमा में स्मृति, भ्रम और तर्क की स्थिति बनी रहती है, अप्रमा अवास्तविक (मिथ्या ज्ञान) का बोध होता है, प्रमा के चार भेद निरूपित हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द और उपमान को प्रमा कहा जाता है जिसका वर्णन इस प्रकार से किया जा सकता है।

प्रत्यक्ष (Perception) - न्याय दर्शन में प्रत्यक्ष को व्यापक अर्थ में लिया गया है। प्रत्यक्ष संशय और भ्रम दोनों का बोध होता है। प्रत्यक्ष का शाब्दिक अर्थ होता है - प्रति + अक्ष। प्रति का अर्थ होता है सम्मुख या सामने तथा अक्ष का अर्थ आँख होता है। इस अर्थ में तो आँख के सम्मुख जो प्रत्यक्ष कहा जाता है लेकिन इतना ही नहीं ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा प्राप्त ज्ञान को प्रत्यक्ष कहा जाता है।

अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों तथा वस्तु के सन्निकर्ष से उत्पन्न ज्ञान को प्रत्यक्ष कहा जाता है,

अब यदि प्रत्यक्ष का भी विश्लेषण किया जाए तो उपर्युक्त ज्ञान के लिए तीन चीजों का होना आवश्यक समझा जाता है:— वस्तु और इन्द्रिय में संबंध होना अर्थात् वस्तु, इन्द्रिय और संबंध सन्निकर्ष का होना।

दूसरे प्रत्यक्ष संशय नहीं होता। कभी-कभी इन्द्रियाँ भी यथार्थ ज्ञान नहीं देतीं जिसे प्रत्यक्ष नहीं कहा जा सकता। प्रत्यक्ष के लिए इन्द्रिय+वस्तु तथा सन्निकर्ष का होना आवश्यक है। उपर्युक्त तीनों के सन्निकर्ष से भ्रम दूर हो जाता है तथा मिथ्या ज्ञान से मुक्ति मिल जाती है। प्रत्यक्ष अनिश्चयात्मक नहीं होता। प्रत्यक्ष सदैव निश्चित ही होता। प्रत्यक्ष भाषा पर भी आधारित नहीं होता। किसी भी विषय का प्रत्यक्ष होने पर उसे भाषा के माध्यम से व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

प्रत्यक्ष की उपर्युक्त परिभाषा को दोष पूर्ण बताते हुए प्राचीन परिभाषा माना है तथा तत्वचिन्तामणि में आधुनिक परिभाषा प्रस्तुत करते हुए कहा है कि साक्षात् ~~प्रति~~ प्रतीति (Immediate Knowledge) ही प्रत्यक्ष की मुख्य पहचान है। प्रत्यक्ष को उपर्युक्त परिभाषा का यह सामान्य लक्षण है। अन्य प्रमाणों से तर्कया पृथक् करता है। अनुमान, उपमान, शब्द इत्यादि प्रमाणों से साक्षात् ज्ञान नहीं होता।

शेष अगले दिन.

MICO LUBRICANTS